**राजस्थान उच्च न्यायालय, जयपुर पीठ**

एकलपीठ सिविल रिट याचिका संख्या 7767/2020

केदार लाल गुप्ता पुत्र स्वर्गीय श्री जमुना लाल गुप्ता, उम्र लगभग 63 वर्ष, निवासी प्लॉट नंबर 11, पुष्पांजलि कॉलोनी, महेश नगर के पास, टोंक फाटक, जयपुर (राजस्थान) वर्तमान में अध्यक्ष, जिला उपभोक्ता फोरम III, जयपुर के रूप में कार्यरत।

**----याचिकाकर्ता**

**बनाम**

1. राजस्थान राज्य-मुख्य सचिव, शासन सचिवालय, जयपुर के माध्यम से।
2. राज्य सरकार-राजस्थान उपभोक्ता मामले, सचिवालय, राजस्थान सरकार के प्रभारी सचिव के माध्यम से।
3. राज्य उपभोक्ता विवाद निवारण आयोग, रजिस्ट्रार, हथकरघा हवेली, पांच बत्ती, जयपुर, राजस्थान के माध्यम से।

**----प्रत्यर्थी**

| | | |
|---|---|---|
| याचिकाकर्ता (गण) की ओर से | : | श्री शिवचरण गुप्ता जी<br>सुश्री नेहा गोयल के साथ |
| प्रत्यर्थी (गण) की ओर से | : | डॉ. गणेश परिहार<br>श्री समीर शर्मा |

**माननीय न्यायमूर्ति अनूप कुमार ढांड**

| | | |
|---|---|---|
| आदेश सुरक्षित करने की तिथि | : | 02/05/2023 |
| आदेश उच्चारित करने की तिथि | : | 17/05/2023 |

**रिपोर्टेबल**

**निर्णय**

(1) याचिकाकर्ता की शिकायत यह है कि चयन समिति द्वारा की गई सिफारिशों के बावजूद, राज्य सरकार ने याचिकाकर्ता को राजस्थान राज्य उपभोक्ता विवाद निवारण आयोग (संक्षेप में "राज्य आयोग") के न्यायिक सदस्य के रूप में नियुक्त नहीं किया है।

(2) याचिकाकर्ता के अधिवक्ता का कहना है कि याचिकाकर्ता और श्री अतुल कुमार चटर्जी क्रमशः जयपुर और जोधपुर में जिला उपभोक्ता विवाद फोरम के अध्यक्ष के पद पर कार्यरत थे और दोनों ने न्यायिक पद पर चयन की प्रक्रिया में भाग लिया था। अन्य उम्मीदवारों के साथ राज्य आयोग के सदस्य और इन दोनों व्यक्तियों के नामों की

सिफारिश उनकी नियुक्ति के लिए चयन समिति द्वारा की गई थी, लेकिन राज्य ने श्री अतुल कुमार चटर्जी को नियुक्त किया और याचिकाकर्ता की नियुक्ति के लिए कोई आदेश पारित नहीं किया गया। अधिवक्ता का कहना है कि ये दोनों व्यक्ति जिला उपभोक्ता विवाद फोरम के अध्यक्ष पद पर थे, लेकिन याचिकाकर्ता को बिना किसी उचित कारण के पद से वंचित कर राज्य ने भेदभाव किया है। अधिवक्ता का कहना है कि राज्य आयोग में न्यायिक सदस्य के पद के लिए याचिकाकर्ता के मामले पर विचार करने के लिए राज्य को उचित निर्देश जारी किए जाए। अपने तर्कों के समर्थन में उन्होंने निम्नलिखित निर्णयों पर भरोसा जताया है:-

(i) चंद्रमोहन नायर बनाम जॉर्ज जोसेफ
एस.एल.पी. (सी) क्रमांक 33694/2009 पर माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा दिनांक 5.10.2010 को निर्णय लिया गया

(ii) श्रीमती. मिथलेश शर्मा बनाम राजस्थान राज्य
[एस.बी. सिविल रिट याचिका संख्या 5415/2015 पर राजस्थान उच्च न्यायालय द्वारा दिनांक 11.8.2015 को निर्णय लिया गया]

(iii) राजस्थान राज्य बनाम श्रीमती। मिथलेश शर्मा
[खंडपीठ सिविल विशेष अपील संख्या 1149/2015 पर राजस्थान उच्च न्यायालय की खंडपीठ द्वारा 3.2.2016 को निर्णय लिया गया]

(3) इसके विपरीत, प्रत्यर्थीगण के अधिवक्ता ने याचिकाकर्ता के अधिवक्ता द्वारा दिए गए तर्कों का विरोध किया। अधिवक्ता का कहना है कि याचिकाकर्ता द्वारा अपनी दलीलों के समर्थन में कोई निर्णायक साक्ष्य पेश नहीं किया गया है। अधिवक्ता का कहना है कि चयन प्रक्रिया में उनकी भागीदारी याचिकाकर्ता को नियुक्ति पाने का कोई अधिकार नहीं देती है। उनका कहना है कि चयन सूची में याचिकाकर्ता का नाम मात्र आने से उसके पक्ष में कोई अपरिहार्य अधिकार नहीं मिल जाता। अपने तर्कों के समर्थन में उन्होंने निम्नलिखित निर्णयों पर भरोसा जताया है:-

(i) अशोक कुमार यादव बनाम हरियाणा राज्य
(1984) 4 एससीसी 417

(ii) के.एच. सिराज बनाम केरल उच्च न्यायालय
(2006) 6 एससीसी 395

(iii) मदन लाल बनाम जम्मू-कश्मीर राज्य
(1995) 3 एससीसी 486

(iv) उडीसा राज्य बनाम राजकिशोर नंदा
(2010) 6 एससीसी 777

(v) शंकरसन दाश बनाम भारत संघ
(1991) 3 एससीसी 47

(vi) <u>आशा कौर बनाम जम्मू और कश्मीर राज्य</u>
(1993) 2 एससीसी 573
(vii) <u>हरियाणा राज्य बनाम सुभाष चंदर मारवाह</u>
(1974) 3 एससीसी 220
(viii) <u>जतिंदर कुमार बनाम पंजाब राज्य</u>
(1985) 1 एससीसी 122

(4) बार में दी गई दलीलों को सुना और उन पर विचार किया और रिकॉर्ड पर उपलब्ध सामग्री का अवलोकन किया।

(5) उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1986 (संक्षेप में "1986 का अधिनियम") की धारा 16(1क) राज्य आयोग के अध्यक्ष और न्यायिक सदस्यों के पद पर नियुक्ति के लिए चयन समिति की सिफारिश की प्रक्रिया से संबंधित है।

1986 के अधिनियम की धारा 16(1क) के अनुसार:-

> "उपधारा (1) के अधीन प्रत्येक नियुक्ति राज्य सरकार द्वारा निम्नलिखित सदस्यों से मिलकर बनने वाली चयन समिति की सिफारिश पर की जाएगी, अर्थात्:-
> i. राज्य आयोग का अध्यक्ष - अध्यक्ष;
> ii. राज्य के विधि विभाग का सचिव - सदस्य;
> iii. राज्य में उपभोक्ता कार्यों से संबंधित विभाग का भारसाधक सचिव - सदस्य:"

उपरोक्त प्रावधान के अवलोकन से पता चलता है कि राज्य आयोग के अध्यक्ष एवं न्यायिक सदस्य के पद पर नियुक्ति चयन समिति की अनुशंसा के बाद राज्य सरकार द्वारा की जाती है।

(6) इस न्यायालय के पूछने पर प्रत्यर्थीगण ने चयन समिति द्वारा की गई सिफारिशों के मूल रिकॉर्ड प्रस्तुत किया और रिकॉर्ड के अवलोकन से पता चलता है कि याचिकाकर्ता और श्री अतुल कुमार चटर्जी क्रमशः जयपुर और जोधपुर में जिला उपभोक्ता विवाद फोरम में अध्यक्ष के पद पर कार्यरत थे और दोनों के नाम न्यायिक सदस्य के पद पर उनकी नियुक्ति के लिए चयन समिति द्वारा सिफारिश की गई थी, लेकिन राज्य ने श्री अतुल कुमार चटर्जी का नाम चुना और याचिकाकर्ता को यह देखते हुए नियुक्त नहीं किया कि याचिकाकर्ता जिला उपभोक्ता कार्यालय में अध्यक्ष के पद पर कार्यरत है। विवाद फोरम जयपुर-तृतीय पिछले दो वर्षों से विवादों में है, ऐसे में उन्हें न्यायिक सदस्य के पद पर नियुक्त करना राज्य हित में उचित नहीं होगा, क्योंकि इससे जिला उपभोक्ता विवाद फोरम

की कार्यप्रणाली बाधित होगी। यही स्थिति श्री अतुल कुमार चटर्जी के मामले में भी थी, जो जोधपुर में जिला उपभोक्ता विवाद फोरम के अध्यक्ष पद पर कार्यरत थे, लेकिन फिर भी उन्हें उनके कार्यकाल के मध्य में न्यायिक सदस्य के पद पर नियुक्ति दी गई थी। राज्य का ऐसा कृत्य दो समान लोगों के बीच भेदभाव के समान है। कानून का यह सुस्थापित प्रस्ताव है कि दो बराबर लोगों के साथ समान व्यवहार किया जाना चाहिए और असमान लोगों के साथ असमान व्यवहार किया जाना चाहिए। समान लोगों को असमान मानना भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 के तहत निहित समानता के सिद्धांत का उल्लंघन होगा।

(7) यह सिद्धांत कि दो बराबर लोगों के साथ असमान व्यवहार नहीं किया जा सकता, न्याय और निष्पक्षता का एक मौलिक सिद्धांत है जिसे दुनिया भर की कानूनी प्रणालियों द्वारा मान्यता प्राप्त है। कई देशों ने इस सिद्धांत को या तो विशिष्ट कानूनों के माध्यम से या संवैधानिक प्रावधानों के माध्यम से अपने कानूनी ढांचे में स्थापित किया है। उदाहरण के लिए, मानव अधिकारों की सार्वभौम घोषणा, जिसे संयुक्त राष्ट्र द्वारा मानव अधिकारों के लिए एक मूलभूत दस्तावेज़ के रूप में मान्यता दी गई है, अनुच्छेद 7 में कहा गया है कि कानून के समक्ष सभी समान हैं और बिना किसी भेदभाव के कानून के समान संरक्षण के पात्र हैं। इसी तरह, कई देशों में भेदभाव-विरोधी कानून हैं जो नस्ल, लिंग, धर्म या अन्य कारकों के आधार पर भेदभाव पर रोक लगाते हैं। ये कानून यह सुनिश्चित करने के लिए डिज़ाइन किए गए हैं कि सभी व्यक्तियों के साथ समान व्यवहार किया जाए, चाहे उनकी पृष्ठभूमि या व्यक्तिगत विशेषताएं कुछ भी हों।

(8) इसमें कोई संदेह नहीं है कि राज्य सरकार नियुक्ति प्राधिकारी है और 1986 के अधिनियम की धारा 16(1क) के तहत चयन समिति की सिफारिशों को स्वीकार करने या न करने का विवेक उसके पास है, लेकिन ऐसी विवेकाधीन शक्तियों का प्रयोग किया जाता है। सरकार का प्रयोग ऐसे तरीके से किया जाना चाहिए जो मनमाना, अनुचित या भेदभावपूर्ण न हो। कई देशों में, सरकारी अधिकारियों और एजेंसियों को विवेकाधीन शक्तियां प्रदान की जाती हैं ताकि वे सरकारी नीतियों और कार्यक्रमों के प्रभावी प्रशासन के लिए आवश्यक निर्णय लेने में सक्षम हो सकें। हालाँकि, इन शक्तियों का प्रयोग सत्ता के दुरुपयोग को रोकने के लिए कुछ कानूनी और संवैधानिक सीमाओं के अधीन होना चाहिए। गैर-

मनमानेपन के सिद्धांत के लिए आवश्यक है कि सरकारी अधिकारियों और एजेंसियों को विवेकाधीन शक्तियों का प्रयोग करते समय अच्छे विश्वास और कानून के अनुसार कार्य करना चाहिए। इसका मतलब यह है कि उनके पास अपने निर्णयों के लिए तर्कसंगत आधार होना चाहिए और उन्हें मनमौजी, मनमौजी या भेदभावपूर्ण तरीके से कार्य नहीं करना चाहिए। विवेकाधीन शक्ति का कोई भी प्रयोग व्यक्तिगत प्राथमिकताओं, पूर्वाग्रहों या पूर्वाग्रहों के बजाय प्रासंगिक और वस्तुनिष्ठ मानदंडों पर आधारित होना चाहिए।

(9) राज्य सरकार द्वारा विवेक के प्रयोग के समान मुद्दे से निपटते हुए, श्रीमती मिथलेश शर्मा बनाम राज्य (सुप्रा.) के मामले में इस न्यायालय की समन्वय पीठ ने निम्नानुसार निर्णय दिया गया है:-

> "1986 के अधिनियम की 10(1क) एक उच्चाधिकार प्राप्त समिति का प्रावधान करती है जिसमें राज्य आयोग के अध्यक्ष इसके अध्यक्ष (एक सेवानिवृत्त/मौजूदा उच्च न्यायालय न्यायाधीश), राज्य के कानून विभाग के सचिव और प्रभारी सचिव शामिल होते हैं। राज्य में उपभोक्ता मामलों से निपटने वाले विभाग के (दोनों वरिष्ठ न्यायिक और प्रशासनिक वर्ग I अधिकारी) इसके सदस्य हैं। उक्त समिति जिला विवाद निवारण फोरम के अध्यक्ष/सदस्य के रूप में नियुक्ति के लिए विज्ञापन पर प्रतिक्रिया देने वाले आवेदकों का साक्षात्कार लेती है और उचित प्रक्रिया का पालन करते हुए उसके संबंध में अपनी सिफारिश करती है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि राज्य सरकार नियुक्ति प्राधिकारी है और 1986 के अधिनियम की धारा 10(1क) के तहत चयन समिति की सिफारिश को स्वीकार करना या नहीं करना उसके विवेक पर निर्भर है। फिर भी न्यायालय यह जोड़ने में जल्दबाजी करेगा कि किसी भी सार्वजनिक प्राधिकरण, सरकार या अन्य में निहित कोई भी विवेक पूर्ण विवेक नहीं है। 1986 के अधिनियम की 10(1क) के तहत अनुशंसित लोगों को नियुक्त न करने का सरकार का विवेक एक निरंकुश का विवेक नहीं है, बल्कि इसे अच्छे और वैध आधार पर प्रयोग किया जाना चाहिए, जैसा कि न्यायालय में एक चुनौती के संबंध में बताया गया है। प्रवर समिति की अनुशंसा के बावजूद सदस्य की नियुक्ति नहीं करना यह मनमाना कदम है। इस संदर्भ में रिट याचिका के उत्तर का संदर्भ 1986 के अधिनियम की 10(1क) के तहत गठित उच्च शक्ति चयन समिति की सिफारिश का पालन न करने के किसी भी अच्छे और प्रशंसनीय कारण का खुलासा नहीं करता है। चयन समिति की सिफारिश के बावजूद याचिकाकर्ता को नियुक्त न करने की राज्य सरकार की शक्ति और विवेक का प्रयोग करने के लिए सामान्य, अस्पष्ट और गैर-विशिष्ट आधार निर्धारित किए गए हैं और वर्तमान याचिका में चुनौती के लिए कोई आकर्षण या प्रासंगिकता नहीं है। रिट याचिका के उत्तर में याचिकाकर्ता के खिलाफ कुछ भी प्रतिकूल रिकॉर्ड पर नहीं लाया गया है और कोई भी कानूनी रूप से टिकाऊ आधार नहीं बताया गया है कि

> 1986 के अधिनियम की धारा 10(1क) के तहत याचिकाकर्ता के लिए चयन समिति की सिफारिशें का पालन क्यों नहीं किया गया। इस न्यायालय द्वारा मांगे जाने पर श्री गुप्ता ने नियुक्ति के लिए याचिकाकर्ता के मामले का रिकॉर्ड भी पेश किया है। इसके अवलोकन से संकेत मिलता है कि प्रासंगिक समय पर संबंधित मंत्री ने 1986 के अधिनियम की धारा 10(1क) के तहत की गई चयन समिति की अन्य सभी सिफारिशों को स्वीकार करते हुए भी, बिना किसी अच्छे कारण के और बिना किसी कारण के उस सिफारिश को निर्देशित करने के लिए आगे बढ़ गए। जिला उपभोक्ता प्रतितोष फोरम, सवाईमाधोपुर में सदस्य (महिला) के पद पर नियुक्ति हेतु याचिकाकर्ता की चयन समिति द्वारा आवेदन स्वीकृत नहीं किये गये। दुख की बात है कि इसके बाद पूरी कार्यपालिका निष्क्रियता में भागीदार बन गई। फ़ाइल पर असहमति की भनक तक स्पष्ट नहीं है। सही कानूनी स्थिति के आधार पर किसी पुनर्विचार की अनुशंसा नहीं की गई। हालाँकि, यह न्यायालय राज्य सरकार द्वारा विवेक के ऐसे मनमाने और द्वेषपूर्ण प्रयोग को बर्दाश्त नहीं कर सकता। यदि यह कानून के शासन के वास्तविक लक्ष्य तक पहुंचता तो इसे एक कल्पना के रूप में प्रस्तुत किया जाता। 1986 के अधिनियम के तहत उपभोक्ता निवारण फोरम के सदस्य के रूप में सार्वजनिक कार्यालय में नियुक्तियाँ संरक्षण की प्रकृति में नहीं हैं, बल्कि 1986 के अधिनियम के तहत अच्छी तरह से परिभाषित और वास्तविक पालन की गई कानूनी प्रक्रिया का परिणाम हैं।
>
> परिणामस्वरूप, मैं इस रिट याचिका को स्वीकार करूंगा और दिनांक 29.01.2015 के आक्षेपित आदेश को रद्द करता हूं, जिसमें जिला उपभोक्ता निवारण फोरम, सवाईमाधोपुर में सदस्य (महिला) के पद पर नियुक्ति के लिए याचिकाकर्ता के अभ्यावेदन को चयन समिति द्वारा अनुशंसित किए जाने के बावजूद खारिज कर दिया गया था। 1986 के अधिनियम की 10(1क)। मैं एक अपरिहार्य परिणाम के रूप में, राज्य सरकार को याचिकाकर्ता के लिए चयन समिति द्वारा की गई सिफारिश पर कार्रवाई करने और इस आदेश की प्राप्ति की तारीख से चार सप्ताह की अवधि के भीतर आवश्यक आदेश पारित करने का भी निर्देश देता हूं।"

(10) इस न्यायालय की समन्वय पीठ द्वारा <u>श्रीमती मिथलेश शर्मा</u> (सुप्रा.) के मामले में पारित निर्णय को चुनौती देते हुए इस न्यायालय की खंडपीठ के समक्ष विशेष अपील (रिट) संख्या 1149/2015- राजस्थान राज्य बनाम श्रीमती मिथलेश शर्मा दायर की गई जिसे 3.2.2016 को ख़ारिज कर दिया गया:-

> "यह सच है कि नियुक्ति प्राधिकारी के रूप में राज्य सरकार, सभी परिस्थितियों में चयन समिति की सिफारिश को स्वीकार करने के लिए बाध्य नहीं हो सकती है। ऐसी स्थितियां हो सकती हैं जहां राज्य सरकार सद्भावनापूर्ण तरीके से कार्य करते हुए और वैध कारणों से चयन समिति की सिफारिश पर कार्य करने से इनकार कर सकती है। उदाहरण के लिए, यदि सरकार के समक्ष ऐसी कोई सामग्री है जो आवेदक की व्यक्तिगत

> सत्यनिष्ठा और चरित्र पर संदेह पैदा करती है, जो चयन समिति की नजरों से बच गई हो।
>
> हालाँकि, मौजूदा मामले में, ऐसा कोई कारण नहीं है जो चयन समिति की सिफारिश के बावजूद प्रत्यर्थी को नियुक्त न करने का निर्णय लेते समय सरकार द्वारा सामने रखा गया हो। एकलपीठ ने फाइल तलब की थी, जिसमें यह स्पष्ट था कि प्रत्यर्थी के साथ चयनित अन्य अभ्यर्थियों को भी प्रवर समिति की अनुशंसा स्वीकार कर नियुक्ति दी गयी थी, लेकिन प्रत्यर्थी को बिना किसी कारण के नियुक्ति नहीं दी गयी। यहां तक कि एकलपीठ के समक्ष दायर लिखित बयान में भी प्रत्यर्थी के खिलाफ कुछ भी प्रतिकूल नहीं बताया गया है और उसमें एकमात्र आधार यह है कि चयन समिति की सिफारिश के बावजूद प्रत्यर्थी को नियुक्त न करना राज्य सरकार के विवेक के अंतर्गत है। प्रवर समिति की सिफारिशों को स्वीकार या अस्वीकार करते समय सरकार के पास इस मामले में विवेक हो सकता है लेकिन इस विवेक का प्रयोग ठोस न्यायिक सिद्धांतों पर किया जाना चाहिए। कानून के शासन द्वारा शासित लोकतंत्र में, विवेक का प्रयोग कारणों और न्याय के शासन द्वारा किया जाना चाहिए, न कि निजी राय के अनुसार। विवेक का प्रयोग कानूनी और नियमित होना चाहिए न कि मनमाना, अस्पष्ट और काल्पनिक।
>
> उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए, हमें एकल पीठ के आदेश में कोई खामी नहीं दिखती जिसके लिए विशेष अपील में हस्तक्षेप की आवश्यकता हो। परिणामस्वरूप, लागत के संबंध में बिना किसी आदेश के अपील खारिज कर दी जाती है।"

(11) इस न्यायालय के उपरोक्त निर्णयों के अवलोकन से संकेत मिलता है कि विवेक का प्रयोग ठोस न्यायिक सिद्धांतों पर किया जाना चाहिए। कानून के शासन द्वारा शासित लोकतंत्र में, विवेक का प्रयोग कारणों और न्याय के शासन द्वारा किया जाना चाहिए, निजी राय के अनुसार नहीं। विवेक का प्रयोग कानूनी और नियमित होना चाहिए न कि मनमाना, अस्पष्ट और काल्पनिक।

(12) इसी प्रकार, चंद्रमोहन नायर (सुप्रा.) के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने पैरा 16 में ऐसी नियुक्तियों के लिए राज्य सरकार की सिफारिश पर विवेक के मुद्दे को निम्नानुसार निर्णय लिया है:-

> "16. इन प्रावधानों के विश्लेषण से पता चलता है कि न्यायिक एवं अन्य सदस्यों की नियुक्ति चयन समिति की अनुशंसा पर राज्य सरकार द्वारा की जानी आवश्यक है। यदि चयन समिति के अध्यक्ष और/या सदस्य किसी व्यक्ति विशेष की उम्मीदवारी पर सहमत नहीं हैं, तो बहुमत की राय चयन समिति की सिफारिश मानी जायेगी। हालाँकि, राज्य सरकार चयन समिति द्वारा की गई सिफारिशों को स्वीकार करने के लिए बाध्य नहीं है, यदि वह

> सिफारिशों को स्वीकार नहीं करना चाहती है, तो ऐसा करने का कारण दर्ज करना होगा। राज्य सरकार चयन समिति की सिफारिशों को मनमाने ढंग से नजरअंदाज या अस्वीकार नहीं कर सकती। यदि राज्य सरकार द्वारा की गई नियुक्ति न्यायिक जांच के अधीन है, तो यह न्यायालय के समक्ष चयन समिति की सिफारिश सहित प्रासंगिक रिकॉर्ड पेश करने के लिए बाध्य है ताकि यह दिखाया जा सके कि सिफारिश को स्वीकार न करने के वैध कारण थे।"

(13) इस प्रकार चंद्रमोहन नायर (सुप्रा.) में उच्चतम न्यायालय के उपरोक्त निर्णय के अनुपात से यह देखा जाता है कि राज्य सरकार चयन समिति द्वारा की गई सिफारिशों को स्वीकार करने के लिए बाध्य नहीं है, हालांकि, उस स्थिति में, ऐसा करने के कारण इसलिए रिकार्ड किया जाना आवश्यक है। इस निर्णय में कहा गया है कि राज्य सरकार चयन समिति द्वारा की गई सिफारिशों को मनमाने ढंग से नजरअंदाज या अस्वीकार नहीं कर सकती है।

(14) इस मामले में, श्री अतुल कुमार चटर्जी और याचिकाकर्ता दोनों एक ही नाव में यात्रा कर रहे थे और वे दोनों अलग-अलग जिला उपभोक्ता विवाद मंचों में अध्यक्ष के रूप में तैनात थे और चयन समिति ने नियुक्ति के लिए दोनों व्यक्तियों के नामों की सिफारिश की थी। राज्य आयोग में न्यायिक सदस्य का पद, लेकिन राज्य ने श्री अतुल कुमार चटर्जी की सिफारिश को स्वीकार कर लिया और याचिकाकर्ता की सिफारिश को मनमाने तरीके से खारिज कर दिया। राज्य द्वारा विवेक का उपयोग अस्पष्ट और काल्पनिक तरीके से किया गया है। प्रत्यर्थीगण द्वारा उद्धृत और विश्वसनीय निर्णय वर्तमान मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में लागू नहीं होते हैं।

(15) उपरोक्त चर्चा के मद्देनजर, यह याचिका प्रत्यर्थीगण को इस निर्देश के साथ स्वीकार की जाती है कि वे याचिकाकर्ता के मामले पर राज्य आयोग में न्यायिक सदस्य के पद पर नियुक्ति के लिए इस निर्णय की प्रमाणित प्रति प्राप्त होने के दो माह की अवधि के भीतर विचार करें, यदि वह अन्यथा उपयुक्त पाया जाता है।

(16) स्थगन आवेदन और सभी आवेदन, यदि कोई लंबित हैं, तो उनका भी निपटारा किया जाता है।

(17) लागत के संबंध में कोई आदेश नहीं।

**(अनूप कुमार ढांड), न्यायमूर्ति**

db/

**टिप्पणी:** इस निर्णय का हिन्दी अनुवाद निविदा फर्म **राजभाषा सेवा संस्थान** द्वारा किया गया है, जिसे फर्म के निदेशक डॉ. वी. के. अग्रवाल, द्वारा मान्य और सत्यापित किया गया है।

**अस्वीकरण:** यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन व कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।